कला में अध्यात्म और धर्म का भाव

सिविलाइजेशन, संस्कृति, सज़्यता में ज़्या तालमेल है, इसको लेकर बहुत सारे लोगों में भ्रम हो जाता है। वास्तव में हमारी कला सज़्यता के साथ-साथ संस्कृति को लेकर चलती है। सज़्यता ज़्या है? इसके केन्द्र में विज्ञान, अर्थ और बाजार है। विज्ञान नए-नए आविष्कार करता है, व्यापारी उसके अनुसार सामान लेकर बाजार में आता है। नए सामान की बाजार में खूब खरीदी होती है। समाज के उपयोग से सज़्यता आगे बढ़ती है। संस्कृति के केन्द्र में अध्यात्म होता है। भारतीय संस्कृति अध्यात्म को लेकर चलती है। सज़्यता उत्पादन को बढ़ाती है। अविष्कार को बढ़ावा देती है। लेकिन संस्कृति हमें उसके उपयोग का तरीका बताती है। मतलब, किसी वस्तु को किस तरह से करना चाहिए यह हमें संस्कृति से मिलता है। सिविलाइजेशन आधारभूमि नहीं है। कला इस संस्कृति के अध्यात्मिक भाव को लेकर चलती है। कला भाव को प्रगट करती है। इसमें भाव संस्कृति तय करती है। अब प्रश्न उठता है कि कला कहां से आई। असल में कला की उत्पति आनंद से हुई है। आनंद भौतिक नहीं है। मनुष्य जब धीरे-धीरे एकाकार होता जाता है तब आनंद का रस बढ़ता जाता है। जैसे कलाकार जब अपनी साधना को जितना आयाम देता जाता है, वह आनंद में डूबता जाता है। कला का संबंध भावनाओं, संवेदनाओं से है। वास्तव में कला अभिव्यज़्ति का एक रूप भी है। कला में एक और गुण होता है अहम का भाव खत्म करने का। श्रेष्ठ कलाकार तब बनता है जब अंदर का अहम भाव समाप्त हो जाता है और कला का भाव पैदा होने लगता है। भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति के लिए कला बहुत जरूरी है। समाज में आनंद की प्रणाली विकसित होनी चाहिए। कला में नाट्य का बहुत महत्व है। ज़्योंकि उसकी भाषा मधुर होती है। नाट्य सब दृष्टि से परिवर्तन का अच्छा साधन बन जाता